सर्वमंगल की भावना और विज्ञान की भूमिका

डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र

आज विज्ञान का युग है। विज्ञान हमारे जीवन में रच बस गया है। वह खेतों, खलिहानों, से लेकर हमारे घर के चूल्हे चौकों तक पहुँच गया है। जीवन का कोई क्षेत्र नहीं बचा है जहां विज्ञान ने अपनी पहुँच न बना ली हो। शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा, आहार, पोषण, संचार, सूचना प्रौद्योगिकी, यातायात, परिवहन, कृषि, वित्त, वाणिज्य, सभी में विज्ञान है। वही मनुष्य को जीवन की बुनियादी जरूरतें जैसे रोटी, कपड़ा, मकान, इत्यादि मुहैया कराने में विज्ञान ने भूमिका निभायी है। दुनिया को विश्वग्राम बनाने में विज्ञान की युगान्तरकारी भूमिका है। एक क्लिक पर दुनिया की किसी वस्तु या घटना के बारे में जानकारी उपलब्ध कराने में विज्ञान ने कल्पनातीत सफलता हासिल की है।

महज दो दशक पहले कितनों को इस बात की कल्पना थी कि एक समय ऐसा भी आएगा जब हमारे हाथ में साधारण मोबाइल नहीं, बल्कि स्मार्ट फोन होगा। पहले जहां तार वाले फोन होते थे वही अब मोबाइल टेलीफोन का जमाना है। अब से कुछ दशक पहले तक घर में फोन होना एक बहुत बड़ी बात माना जाता था। यह स्टेटस सिंबल की तरह था। मनोरंजन के साधन के तौर पर रेडियो था। मनपसंद फिल्मी गाने सुनने के लिए फरमाइशी पत्र आकाशवाणी केन्द्र को भेजे जाते थे। लोग निश्चित समय पर चौपाल में जुटकर, अपनी पसंदीदा गाने का इंतजार करते थे। लोगों के पास तब बहुत समय और सब्र हुआ करता था। अब पसंदीदा गाने के लिए इंतजार जरूरी नहीं रह गया है। अब वह हमारे स्मार्ट फोन में ही निहित है। जब, जहां चाहें, अपनी पसन्द का गीत, गजल, भजन, संगीत, प्रवचन, व्याख्यान, सब कुछ सुन सकते हैं। सोर्स से डाउनलोड कर सकते हैं। शैक्षिक कोर्स से संबन्धित तमाम विषयों पर लेक्चर्स, प्रस्तुतियां, नोट्स, वगैरह वेबसाइटों पर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं।

सूचना-संचार का संसार

पहले के समय में अपने किसी परिजनों का कुशलक्षेम लेने के लिए लोग डाक से चिट्ठी भेजते थे। फिर जवाब का इंतजार करते थे। इसमें न्यूनतम दो सप्ताह तो लग ही जाते थे। तार यानी टेलीग्राम समाचार भेजने का साधन जरूर था, लेकिन वह बहुत जरूरी तथा प्राय: आपातकालीन स्थिति में लोगों द्वारा प्रयुक्त होता था। तार की भाषा

आधुनिक शिक्षा ऐसी हो जो प्रगतिशील हो, जीवन की जड़ता को दूर करे। मनुष्य को उदार तथा सहिष्णु बनाये। मनुष्य चीजों तथा घटनाओं को समग्रता में देखे। प्रकृति तथा पर्यावरण के सरोकारों के प्रति संवेदनशील बने। विज्ञान सम्यक दृष्टि पैदा करे, जिसमें मनुष्य छुद्र तथा संकीर्ण विचारों से ऊपर उठे। मनुष्य की गरिमा समाज में सर्वोपरि हो। यदि ऐसा तंत्र तथा विचार समाज में विकसित तथा स्थापित हो सके तो निश्चित रूप से राष्ट्रीय एकता को बहुत बल मिलेगा।

आंग्लभाषा हुआ करती थी। उसका मतलब गांव-देहात में लोगों को बड़ी मुश्किल से समझ में आता था। उसे पढ़वाने के लिए किसी भाषा के समझने वाले की खोज की जाती, तब अर्थ खुलता था। ये सारी बातें ज्यादा नहीं, तीन से चार दशक पहले की ही हैं। टेलीग्राम अब इतिहास हो चुका है। टेलीग्राम सेवा वित्तीय तथा व्यावहारिक रूप से अनुपयोगी होने के कारण कभी की बन्द की जा चुकी है। नये वर्ष पर मित्रों, सगे-संबंधियों को बधाई कार्ड भेजने का चलन था। समय ने सभी को परिदृश्य से विलुप्त कर दिया है।

जब हम विज्ञान की चर्चा करते हैं तो सरसरी तौर पर हमें लगता है कि विज्ञान व्यक्तिनिष्ठ नहीं है। वह प्रकृति तथा ब्रह्माण्ड के भौतिक सत्य का अन्वेषण है। इसके तरह हम प्रकृति के नियामक घटकों, उनके परस्पर सम्बन्धों तथा भौतिक नियमों का अध्ययन करते हैं। इन बातों का व्यक्ति के सामाजिक परिवेश, या उसके जीवन के सांस्कृतिक मूल्यों से कोई लेना देना नहीं है। लेकिन हकीकत यही है कि एक विधा के रूप में विज्ञान मानव समाज के परिप्रेक्ष्य में पूर्णतः निरपेक्ष नहीं है। जब मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह एक समुदाय का हिस्सा है। फिर विज्ञान की खोज, तथा शोध में लगे विज्ञानी भला निरपेक्ष कैसे रह सकते हैं।

राष्ट्रीय एकता का प्रश्न

सवाल यह उठता है कि जिस विज्ञान ने समाज को इतने साधन सुलभ करा दिये, वह राष्ट्रीय एकता में क्या भूमिका रखता है। राष्ट्र के ताने-बाने को समृद्ध करने में इसकी कोई भूमिका बनती है क्या? एक चिंतन पद्धति के रूप में तार्किकता तथा वस्तुनिष्ठता हमारे समाज में क्या कोई स्थान बना पायी है? प्रथम दृष्टया विज्ञान एक अमूर्त तथा मूल्य निरपेक्ष विषय लगता है। क्या हमारे सामाजिक जीवन में विज्ञान उसी तरह की भूमिका में है? क्या उसने विश्वग्राम बनाने की प्रक्रिया में सँकरी तथा तंग विचारधाराओं तथा मान्यताओं को दरकिनार करने में सफलता पायी है। क्या उसने समाज में वैश्विक दृष्टिकोण जगाने में सार्थक भूमिका निभायी है? अव्वल तो यह भी कि क्या सचमुच ही समाज वैश्विक हुआ है। या उससे उलट विज्ञान के साधनों ने लोगों को एक-दूसरे से दूर कर दिया है। क्या सोशल मीडिया के आभासी साधनों ने व्यक्ति को व्यक्ति से विभक्त तथा परे नहीं धकेल दिया है? घर तो दूर, क्या सार्वजनिक स्थलों पर भी व्यक्ति नितांत अकेला नहीं हो चला है? बस, ट्रेन, हवाई जहाज से यात्रा के दौरान क्या वह अपने सहयात्री के साथ संवाद की जीवंतता से वंचित नहीं हो गया है? बहुतों का अनुभव तो फिलहाल यही कहता है कि विज्ञान ने व्यक्ति को आत्मपरक बना दिया है। वह समाज का हिस्सा होते हुए भी समाज के सरोकारों से सीधे जुड़ नहीं पा रहा है। वह डिटिजट दुनिया के आभासी लोक में विचरण का आदी होता जा रहा है।

विज्ञान की मूल प्रकृति

जब हम विज्ञान की चर्चा करते हैं तो सरसरी तौर पर हमें लगता है कि विज्ञान व्यक्तिनिष्ठ नहीं है। वह प्रकृति तथा ब्रह्माण्ड के भौतिक सत्य का अन्वेषण है। इसके तरह हम प्रकृति के नियामक घटकों, उनके परस्पर सम्बन्धों तथा भौतिक नियमों का अध्ययन करते हैं। इन बातों का व्यक्ति के सामाजिक परिवेश, या उसके जीवन के सांस्कृतिक मूल्यों से कोई लेना देना नहीं है। लेकिन हकीकत यही है कि एक विधा के रूप में विज्ञान मानव समाज के परिप्रेक्ष्य में पूर्णतः निरपेक्ष नहीं है। जब मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह एक समुदाय का हिस्सा है। फिर विज्ञान की खोज, तथा शोध में लगे विज्ञानी भला निरपेक्ष कैसे रह सकते हैं। विज्ञान भी सामाजिक विधा है, वह समाज के व्यापक हितों को मद्देनजर संचालित होता है। वह व्यक्तिनिष्ठता से भला दूर कैसे हो सकता है।

वैज्ञानिक उन्नति के फलाफल

विज्ञान की तरक्की के साथ समाज में बढ़ रहे भौतिकवाद, बाजारवाद तथा घनघोर पूँजीवाद ने समरसता पर प्रहार किया है। तरह तरह की वस्तुओं, तथा सेवाओं का प्रलोभन दिया जा रहा है। बाजारवाद लोगों को ज्यादा से ज्यादा खरीदने को ललचा रहा है। विज्ञापनी दुनिया में यह बात जेहन में पैठाने की पुरजोर कोशिश है कि ज्यादा से ज्यादा सामान जुटा लेने से जीवन सुखमय हो जाएगा। समाज तथा लोगों के बीच हैसियत बढ़ जाएगी। वास्तव में दौलत के अशिष्ट प्रदर्शन ने फिजूलखर्ची को प्रोत्साहित किया है। उच्चवर्ग की देखादेखी मध्यवर्ग, तथा उनके अनुगामी निम्नवर्ग की

हालत खस्ता होती जा रही है। जरूरतों को सीमित रखने की बात हो ही नहीं रही। देश के विकास को बिक रही कारों की संख्या से आंका जा रहा है। जब कि शहरों में कारों, मोटरों के रखने, खड़ा करने की जगह ही नहीं बची है। महानगरों में सड़कों पर लम्बा ट्रैफिक जाम का दृश्य अब आम हो चला है। कर्ज लेकर साधन जुटाने को प्रोत्साहित किया जा रहा है। आम आदमी की श्रम से अर्जित पूँजी पर मुनाफाखोरों की कुदृष्टि है। ऐसे भयावह दौर में प्रचण्ड भौतिकवाद का नाग फन उठाये फुफकार रहा है। कोरोना के दौर में दुनिया भर में मध्यम वर्ग सबसे ज्यादा प्रभावित हुआ है। गरीब और भी गरीब होता गया है। इसके विपरीत दुनिया में पूँजीपतियों की संपत्ति में बेतहाशा वृद्धि हुई है। अभिजात्य वर्ग तथा विपन्न वर्ग के मध्य का फासला उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है। फिर राष्ट्रीय एकता, समरसता, बंधुत्व भला इससे क्यों कर प्रभावित नहीं होगा?

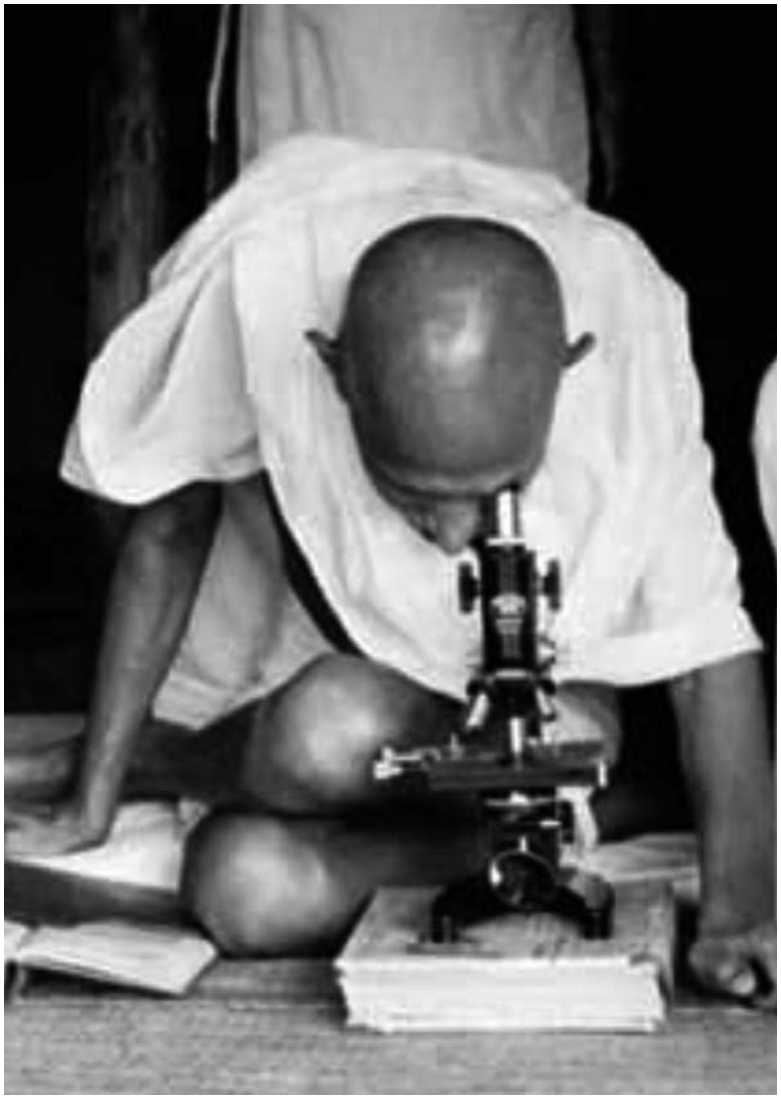

अवधारणात्मक परिवर्तन

इस प्रश्न में गहरे उतरने के पहले हमें विज्ञान की पृष्ठभूमि को समझना होगा। पुराने जमाने के चिंतक, विचारक, मूलत: प्रकृतिशास्त्री थे। वे प्रकृति के घटकों, अवयवों तथा उनकी कार्यप्रणाली को स्थूल रूप में देखते हुए निष्कर्ष निकालते थे। वे अपने समय के दार्शनिक थे। इसमें महर्षि कणाद, कपिल मुनि, चार्वाक, वगैरह का जिक्र किया जा सकता है। यूनान की समृद्ध परंपरा में सुकरात, प्लेटो, अरस्तू इत्यादि के नाम बहुत जाने पहचाने हैं। वे अपने समय के वैज्ञानिक थे। लेकिन जिस विज्ञान की बात हम कर रहे हैं, वह वास्तव में आधुनिक विज्ञान है। इसकी शुरुआत यूरोपीय पुनर्जागरण के साथ हुई है जिसका काल हम 14वीं सदी से लेकर 17वीं सदी तक मानते हैं। इस दौरान अरस्तूवादी विचारधारा का प्रभाव समाप्त होना शुरू हुआ। प्रयोगों, प्रेक्षणों तथा तर्कशील चिंतन पर आधारित बातों का नया जमाना शुरू हुआ। दूरबीन के आविष्कार के साथ दुनिया का बना-बनाया नक्शा पटल से हट गया। इटली के गैलीलियो ने प्रायोगिक विज्ञान पर बल दिया तथा महत्वपूर्ण खगोलीय खोजों के लिए दूरबीन का आविष्कार किया। महान सार्वकालिक वैज्ञानिक अलबर्ट आइंस्टाइन ने गैलीलियो को आधुनिक विज्ञान का जनक कहा है। आधुनिक विज्ञान में धर्म से हटकर तर्कसम्मत बातें स्वीकार करने पर बल था। विज्ञान का लक्ष्य मनुष्य को बनी बनायी अवधारणाओं से इतर तार्किक धरातल पर प्रकृति को समझना था। इससे आधुनिक विज्ञान को चर्च

तथा पादरियों के जबर्दश्त विरोध का सामना करना पड़ा। विज्ञान का उद्देश्य मनुष्य को धर्म, परलोकवादी मान्यताओं से मुक्त करना था। उसका उद्देश्य मनुष्य को स्वायत्त जीवन की दिशा में ले जाना था।

विज्ञान, सार्वभौमिकता और निरपेक्षता

विज्ञान की सार्वभौमिकता तथा निरपेक्षता को लेकर तमाम तरह के सवाल विद्वानों द्वार उठाये जाते रहे हैं। विज्ञान को उपनिवेशवाद के लिए भी जिम्मेदार ठहराया जाता है। ब्रितानी सरकार ने विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की तरक्की के साथ तमाम साधन जुटा लिए। वह एशिया तथा अफ्रीका के अनेक देशों पर काबिज हो गया। उसके पास बेहतर जहाजें, संचार प्रणाली, अस्त्र-शस्त्र, तथा साजोसामान था। इसलिए उसने अपने साधनों को बुद्धिकौशल से प्रयोग करते हुए दुनिया के बहुत बड़े भूभाग पर कब्जा कर लिया। एक समय तो कहा जाता था कि अंग्रेजी साम्राज्य में सूरज अस्त नहीं होता था। इन्हीं के बूते अमेरिका के मूल निवासियों, रेड इंडियन लोगों पर अमानवीय जुल्म हुए, उन्हें अपने ही भूभाग से समाप्त कर दिया गया। ये सभी बातें इतिहास में दर्ज हैं तथा आधुनिक इतिहास की कटु सच्चाई है।

'हिन्द स्वराज', तथा 'नई तालीम' पुस्तकों में वर्णित उनकी बातें हमारे लिए पथप्रदर्शक हो सकती हैं। गांधीजी मानते थे कि विज्ञान तथा वैज्ञानिक का कार्य मनुष्य को कष्ट तथा पीड़ा से मुक्ति दिलाना है। उनका मानना था कि विज्ञान के फल से सबका भला हो। वह किसी वर्ग विशेष के लिए अन्य लोगों के शोषण का औजार न बन जाए। वह बाजारवाद को प्रश्रय देने वाला न हो से ज्यादा ताकत देने वाला हो। विज्ञान तथा उसके साधन ऐसे हों जो व्यक्ति की स्वायत्तता तथा संप्रभुता को समृद्ध करने वाले हों। गांधीजी मूल्यपरक विकास के समर्थक थे।

विज्ञान की मुक्तिकारी भूमिका

सन् 1946 में अपनी पुस्तक, 'द डिस्कवरी आफ इंडिया' में पं. जवाहरलाल नेहरू ने साइंटिफिक टेम्पर यानी वैज्ञानिक मिजाज शब्द का प्रयोग किया था। इससे उनका आशय रोजमर्रा के जीवन में वैज्ञानिक ढंग से सोचने, कार्य करने तथा व्यवहार करने से था। यह हमारे प्रकृति तथा परिवेश में हो रहे घटनाक्रम को तार्किक नजरिये से देखने से जुड़ा है। इससे कोई व्यक्ति तार्किकता से निर्णय लेता है। लेकिन वही इंसान तकनीकी तरक्की के चलते भौतिकतावाद तथा बाजारवाद से प्रेरित होकर साधनों का गुलाम बनने की ओर अग्रसर है। अब प्रश्न उठता है कि विज्ञान मुक्तिकारी कैसे बने। इस बारे में महात्मा गांधी के विचार भारतीय समाज के लिए मार्गदर्शक हो सकते हैं। 'हिन्द स्वराज', तथा 'नई तालीम' पुस्तकों में वर्णित उनकी बातें हमारे लिए पथप्रदर्शक हो सकती हैं। गांधीजी मानते थे कि विज्ञान तथा वैज्ञानिक का कार्य मनुष्य को कष्ट तथा पीड़ा से मुक्ति दिलाना है। उनका मानना था कि विज्ञान के फल से सबका भला हो। वह किसी वर्ग विशेष के लिए अन्य लोगों के शोषण का औजार न बन जाए। वह बाजारवाद को प्रश्रय देने वाला न हो से ज्यादा ताकत देने वाला हो। विज्ञान तथा उसके साधन ऐसे हों जो व्यक्ति की स्वायत्तता तथा संप्रभुता को समृद्ध करने वाले हों। गांधीजी मूल्यपरक विकास के समर्थक थे।

गांधीजी मानते थे कि वैज्ञानिक युक्तियाँ इंसान के लिए मददगार हों, लेकिन ऐसा न हो कि हम इनके अधीन हो जाएं जैसा कि अब हो रहा है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, विकास तथा मानव समाज के मध्य के सम्बन्धों को बारीकी से देखने समझने की जरूरत है। समाज में शैक्षिक सुधार से ही विज्ञान सम्मत सोच वाले समाज का निर्माण संभव है। सिर्फ तकनीकी साधनों तथा मशीनों के बूते समाज में वैज्ञानिक सोच को बढ़ावा नहीं दिया जा सकता। विगत कुछ एक दशक के अनुभव बताते हैं कि इलेक्ट्रॉनिक, डिटिजल, तथा सोशल मीडिया के विविध प्लेटफॉर्म उपलब्ध हो जाने के बावजूद वैज्ञानिक साक्षरता में कोई क्रांतिकारी बदलाव नहीं आया है। कहीं-कहीं तो सूचना तथा संचार तकनीक से दकियानूसी तथा बेबुनियाद बातों को बढ़ावा ही मिला है। ऐसा हम सब अपने दैनंदिन जीवन में देख सकते हैं।

विज्ञान साक्षरता की आवश्यकता

देश में विज्ञान साक्षरता जरूरी है। जन मानस में न्यूनतम विज्ञान साक्षरता की अवधारणा लम्बे समय से रही है। इससे

विज्ञान सम्मत सोच वाले समाज का निर्माण हो सकता है। दुनिया के लिए जरूरी है कि विज्ञान का उपयोग मानव समाज का उदात्त हित साधने में किया जाए। ज्ञान की अन्य विधाओं के साथ यह भी एक विधा है। इस विधा को किसी विशेषाधिकार वाली प्रवृत्ति नहीं माना जा सकता। लेकिन जैसा कि ब्रिटेन के प्रोफेसर ए. वी. हिल ने कहा है कि बिना समाज के नैतिक धरातल को मजबूत किये सर्वकल्याण की बात करना भ्रामक है। एडिनबरा के डूक ने पूछा था कि अगर मनुष्य ही जीवित न रहे तो फिर विज्ञान का क्या उपयोग है? यानी विज्ञान का चरम तथा परम लक्ष्य मानव कल्याण ही होना चाहिए। अतिशय वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रगति ने अनपेक्षित कठिनाइयों तथा खतरों को जन्म दिया है। स्वास्थ्य, चिकित्सा तथा पोषण से जुड़े विज्ञान ने बेशक मनुष्यों की जीवन प्रत्याशा को बढ़ाया है। जीवन की भौतिकीय गुणवत्ता में भी सुधार हुआ है। कोरोना की वैश्विक महामारी के दौर में रिकॉर्ड समय में तमाम वैक्सीन विकसित करके विज्ञान ने लाखों जिंदगियां बचा लीं। लेकिन जैवप्रौद्योगिकी के कारण जैविक अस्त्र के रूप में तमाम विषाणु तथा रोगाणु पैदा करके दुनिया ने धरती पर जीवन को खतरे में डाला है। इसके कितने खतरनाक नतीजे होंगे, अब यह बात किसी के लिए नयी नहीं है। यानी हम किसी तकनीक को चाहें तो भलाई के लिए उपयोग कर सकते हैं। यदि चाहें तो दुश्मन देश पर उसे विनाशकारी अस्त्र के रूप में प्रयोग कर सकते हैं।

धरती पर इंसानी सभ्यता का भविष्य?

वैज्ञानिक धरती पर मानव सभ्यता को लेकर अपनी राय तथा चिंता व्यक्त करते रहे हैं। महान भौतिकीविद् प्रो. स्टीफन हॉकिंग धरती पर जीवन तथा सभ्यता को लेकर सजग तथा चिंतित थे। उन्होंने धरती पर इंसानी सभ्यता के भविष्य को लेकर कई महत्वपूर्ण बातें कही थीं। ब्लैकहोल तथा बिगबैंग थ्योरी में उन्होंने बुनियादी शोधकार्य किया था। आज से कुछ साल पहले बीबीसी के लिए दिये गये अपने इंटरव्यू में उन्होंने चेताया था कि इंसान के धरती पर रहने का समय पूरा होता जा रहा है। अब उसे अपने लिए दूसरी धरती खोज लेनी चाहिए। यह कार्य इंसान को अगले 100 वर्षों में कर लेना चाहिए। उनका मानना था कि जलवायु परिवर्तन, मानव सभ्यता के अस्तित्व के लिए सबसे बड़ा खतरा है। उनका कहना था कि धरती की सेहत बुरी तरह बिगड़ चुकी है। यदि बहुत जल्दी इसे बचाने के कदम नहीं उठाए गये तो बाद में चलकर वह ऐसी स्थिति में पहुँच जाएगी कि हम चाहकर भी कुछ नहीं कर पाएंगे। फिर लाख उपाय करके भी धरती को नहीं बचाया जा सकेगा। उन्होंने लोगों को खबरदार किया था कि तकनीकी विकास, विशेष करके कृत्रिम बुद्धि, शायद मानव सभ्यता की अंतिम उपलब्धि होगी।

उपरोक्त चर्चा से यह बात स्पष्ट है कि सिर्फ वैज्ञानिक तरक्की से मानवता का कल्याण नहीं हो सकता। जरूरी है कि विज्ञान मूल्यपरक हो, नीतिपरक हो, उसका चेहरा मानवतावादी हो। वह सर्वमंगल की भावना से संपृक्त हो। वैज्ञानिक शोध में व्यक्ति तथा मानवसमाज के प्रति समत्व तथा ममत्व का भाव हो। तभी वह दुनिया का सर्वांगीण भला कर पाएगा। हर व्यक्ति अपने को विज्ञान से लाभान्वित पाएगा। विज्ञान चंद लोगों के लिए बाकियों के शोषण का माध्यम कदापि न बने। विज्ञान पूँजीवाद, बाजारवाद तथा भौतिकतावाद को पोषित करने वाला तो बिलकुल ही न हो। वह धरती पर मौजूद समस्त जड़ चेतन को एक संयुक्त इकाई मानकर चले। वह किसी लोभ लाभ की संकीर्ण प्रवृत्त से बचे। अपने चेहरे को मानवीय बनाए। इससे समाज में समरसता तथा सौहार्द बना रहेगा। बिना शांति, तथा समरसता के मानव समाज सुखी कैसे रह सकता है?

आधुनिक शिक्षा ऐसी हो जो प्रगतिशील हो, जीवन की जड़ता को दूर करे। मनुष्य को उदार तथा सहिष्णु बनाये। मनुष्य चीजों तथा घटनाओं को समग्रता में देखे। प्रकृति तथा पर्यावरण के सरोकारों के प्रति संवेदनशील बने। विज्ञान सम्यक दृष्टि पैदा करे, जिसमें मनुष्य छुद्र तथा संकीर्ण विचारों से ऊपर उठे। मनुष्य की गरिमा समाज में सर्वोपरि हो। यदि ऐसा तंत्र तथा विचार समाज में विकसित तथा स्थापित हो सके तो निश्चित रूप से राष्ट्रीय एकता को बहुत बल मिलेगा। यह सूत्र समूचे विश्व के लिए एक मंत्र सदृश है। इससे अंतरराष्ट्रीय शांति तथा सद्भाव में मदद मिलेगी। धरती संपूर्ण मनुष्यता के लिए एक बेहतर निवास साबित होगी। सर्वे भवन्तु सुखिनः, विज्ञान का मूलमंत्र होना चाहिए।

सम्पर्कः एसोसिएट प्रोफेसर, होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र, टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान, (डीम्ड यूनिवर्सिटी) मुंबई-400088